International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 15 Issue 1,Jan- 2025
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 8.018
(An open access scholarly, peer-reviewed, interdisciplinary, monthly, and fully refereed journal.)

शिक्षक प्रशिक्षण में भगवद्गीता की व्यवहारिकता का अध्ययन

डॉ० रविकान्त सरल
प्राचार्य, जागृति डिग्री कॉलेज, सिसौली, मेरठ

सार

शिक्षक प्रशिक्षण में समस्त समाधानों के लिए भगवद्गीता की व्यवहारिकता बहुत महत्त्वपूर्ण है। वर्तमान समय में छात्र मेहनत से अधिक फल का इच्छुक है, जिसके कारण उसका व्यवहार आक्रामक हो रहा है। भगवद्गीता की व्यवहारिकता के ज्ञान में मृतप्राय अन्तरात्मा को जागृत किया जा सके। भगवद्गीता का दर्शन किसी काल या देश विशेष का नहीं है अपितु वह तो सर्वकालिक है। भगवद्गीता में विद्यमान शिक्षक प्रशिक्षण विधियाँ वर्तमान शिक्षा के उद्देश्यों को परिपूर्ण करती है।

शब्द कुंजीः परिप्रेक्ष्य, शिक्षक प्रशिक्षण, भगवद्गीता, व्यवहारिकता, अन्तरात्मा।

प्रस्तावना

हजारों वर्ष पूर्व विकसित हुए भगवद्गीतोक्त दर्शन में आधुनिक युग के लिए भी संदेश छिपा हुआ है। भगवद्गीता एक ऐसा महान ग्रंथ है जो केवल वर्तमान के लिए ही संदेश नहीं देता अपितु भविष्य को भी अपने चिन्तन–मनन तथा विचार से प्रेरणा देकर जीवित रखता है।

[1] ऐसे ग्रंथ वस्तुतः मानव जाति के उद्धारक होते हैं। इसके उपदेशों की गूँज युगों–युगों तक मानव मस्तिष्क में गूंजती रहती है, तथा झंकार मानव मन को सदा झंकृत करती रहती है। इनका विचार दर्शन इतना उच्च कोटि का होता है कि उसमें अतीत, वर्तमान, भविष्य का सामयिक एवं उचित सामंजस्य मिलता है। भगवद्गीता का महत्व न केवल तत्कालीन रहा वरन् आधुनिक युग में भी उराका महत्व एवं उपयोगिता अक्षुण्ण बनी हुई है।[2] वर्तमान शैक्षिक संदर्भ में भगवद्गीता के शिक्षा दर्शन के मूल्यांकन से हमें वह दिशा मिल सकती है जिस पर चलकर आधुनिक शिक्षा–शास्त्र आधुनिक विश्व में मानव समाज के निर्माण में महत्त्वपूर्ण योगदान दे सकता है।

आज प्राचीन अनिवार्य संस्कृति टूट रही है, जब नैतिक मानदण्ड नष्ट हो रहें हैं, जब जड़ता या अचेतनता से जगाने के प्रयास हो रहे हैं, जब वातावरण में उत्तेजना व्याप्त है, भीतर उथल–पुथल मची है और संस्कृति पर संकट उपस्थित है, तब आध्यात्मिक आंदोलन का भारी ज्वार जनमत को आप्लावित कर सकता है। दिगन्तु में भारतीय जनमानस को नूतन, अपूर्व और आध्यात्मिक पुनर्जागरण के सूत्रपात का आभास हो चुका है। भारत एक ऐसा देश है जहाँ सांस्कृतिक आदान–प्रदान की पर्याप्त स्वतंत्रता है, जहाँ कोई किसी की उपेक्षा नहीं कर सकता।

वर्तमान पीढ़ी के शिक्षाविदों के सम्मुख आज जो मुख्य कार्य है वह इन केन्द्राभिमुखी सांस्कृतिक प्रणालियों के विभिन्न दार्शनिक आदर्शों में समन्वय स्थापित करना है जिससे कि वह आपसी संघर्ष के स्थान पर एक दूसरे को सहारा व संबल प्रदान कर सकें। इस प्रक्रिया के द्वारा वह भीतर से रुपांतरित होगी और उन्हें पृथक करने वाले रुप अपना एकांतिक अर्थ खो देंगे और अपने निजी स्रोतों और प्रेरणाओं से केवल उस एकता को ही व्यक्त करेंगे।

अध्ययन की आवश्यकता

'विश्वमाता, मेरी माता है, परमेश्वर मेरा पिता है, सभी मानव मेरे भाई है तथा तीनों लोक ही मेरा स्वदेश है।' यह कथन भगवद्गीता की शिक्षा व शिक्षण व्यवस्था द्वारा प्रतिपादित विचारधारा को इंगित करता है। इस संदेश को न केवल शिक्षा को वरन् सभी देशों तथा संयुक्त राष्ट्रादि संस्थाओं को तुरन्त अपना लेना चाहिए। इसमें निर्दिष्ट भावना को अंगीकृत करके ही विश्वबंधुत्व, विश्वशांति तथा विश्वकल्याण का स्वप्न साकार हो सकता है। भगवद्गीता में नियमित दिनचर्या में बलिवैश्वदेव आदि कर्मों को स्थान दिया है। इन कर्मों का प्रयोजन जहाँ देवताओं को संतुष्ट करना है,[3] वहीं पशुपक्षी आदि प्राणियों का भी हित–चिन्तन करना है। हमारे यहाँ प्राणिमात्र से ममत्व पर बल दिया है। इसलिए शिक्षा में दया, करूणा, सहानुभूति को भी वीरता के साथ–साथ स्थान दिया गया है। 'प्राणिमात्र के लिए ममत्व का सिद्धान्त' विश्व को तत्काल अपना लेना चाहिए। यह सृष्टि केवल मानवों के लिए ही नहीं है, पशु पक्षी आदि जीव मात्र खाद्य पदार्थ नहीं है अपितु वे भी इसी विश्व में मानव के सहचर हैं। इन सहचरों के अभाव में मानव जाति के हित भी सुरक्षित नहीं रह पायेंगे। जिस समाज में ऐसी विचारधारा मान्य व लागू हो जायें तो हम कल्पना कर सकते है कि कितना खुशहाल होगा वह समाज। इसलिए शिक्षा में भगवद्गीता के दर्शन का समावेश वर्तमान परिप्रेक्ष्य में अति आवश्यक प्रतीत होता है।

शोध विधि

प्रस्तुत शोध कार्य दार्शनिक एवं ऐतिहासिक शोध के अन्तर्गत आता है, इसकी प्रमुखतः विधि ऐतिहासिक है जिसका आधार दार्शनिक है, जिसके अन्तर्गत किसी दार्शनिक तत्व, महान चिन्तक या शिक्षाविद् के शैक्षिक विचारों का विश्लेषणात्मक एवं आलोचनात्मक अध्ययन किया जाता है। सम्बन्धित विचारक के लेखों, ग्रन्थों, भाषणों एवं अन्य उपलब्ध साक्ष्यों के आधार पर ज्ञात विचारों या चिन्तन को एक विशेष परिप्रेक्ष्य में रखना इस प्रकार के अनुसंधान का मुख्य विषय है। शोध विषय **''शिक्षक प्रशिक्षण में भगवद्गीता की व्यवहारिकता का अध्ययन''** भी दार्शनिक विधिक अन्तर्गत आने वाला विषय है, जिसमें महान दार्शनिक एवं वेदान्ती महर्षि वेदव्यास द्वारा चरित महाभारत के भीष्मपर्व से उद्धृत श्रीमद्भगवद्गीता का विश्लेषणात्मक अध्ययन करके वर्तमान शिक्षा प्रणाली में इसकी आवश्यकता एवं उपयोगिता को ध्यान में रखकर इस विषय की प्रासंगिकता को स्पष्ट करना है।

शिक्षा के स्वरूप

आज सभी ओर भौतिकता का बोलबाला रहा है और आध्यात्मिकता का महत्व कम होता जा रहा है। आज नैतिक मूल्यों का सर्वथा अभाव दिखाई देता है। अतः आध्यात्मिक शिक्षा की आवश्यकता अनुभव होने लगी है, भगवद्गीता के अनुसार शिक्षा तब तक चलती रहती है जब तक लक्ष्य प्राप्त न हो जाये, चाहे इसके लिए कितने ही जन्म क्यों न लेने पड़े। मनुष्य का अपने स्वरूप को पहचानना ही शिक्षा है।[4] सर्वत्र भौतिकता का बोलबाला होने से शिक्षा का स्वरूप भी भौतिक होता जा रहा है। आज शिक्षा केवल बौद्धिक विकास कर रही है। मानवीय मूल्य, नैतिकता, आध्यात्मिकता की उपेक्षा हो रही है, फलस्वरूप जीवन में एक दूसरे के लिए संवेदनाएं समाप्त होती जा रही है। इसलिये सभी शिक्षा आयोगों ने नैतिक एवं धार्मिक शिक्षा की संस्तुति की है। इस प्रकार भगवद्गीतोक्त शिक्षण के स्वरूप की आज अत्यधिक आवश्यकता है।

शिक्षा के उद्देश्य

भगवद्गीता की शिक्षा प्रमुख उद्देश्य फल की आसक्ति के बिना कर्म करने का है। निर्लिप्त भाव से परिणाम की चिन्ता किये बिना कर्म करना ही भगवद्गीता को अभीष्ट है। भगवद्गीता आत्मिक विकास को भी शिक्षा का प्रमुख लक्ष्य मानती है। जिससे बालक अन्तरात्मा की आवाज को सुन सके, उसे पहचान सके और सामाजिक अन्याय का विरोध कर सके। आत्मा चूँकि परमात्मा का अंश होती है। अतः वह कभी गलत हो नहीं सकती। निर्णय लेने की स्वतंत्रता भी होनी चाहिए।[5] यह निर्णय अन्तरात्मा की आवाज के आधार पर करना चाहिए। यदि अन्तरात्मा को न सुना गया तो समाज की विशेष हानि तो होगी ही बालक का विकास भी रूक जायेगा।

भगवद्गीता में अनुशासन

भगवद्गीता स्वानुशासन पर बल देती है। शिष्य को तपस्वी एवम् संयमी होना चाहिए। अनुशासन को लादना नहीं है वरन् छात्र को इस हेतु प्रेरित करना है। अनुशासन बालक के दिवेक पर निर्भर करता है। किसी बाह्य दबाव, प्रभाव अथवा विवशता में आकर बालक अनुशासित नहीं हो सकता। यही आत्मानुशासन अथवा स्वानुशासन कहलाता है। भगवद्गीता में गुरू छात्र पर दवाब नहीं डालते।[6] मन और इन्द्रियों का संयम करके शिक्षार्थी मन को एकाग्र करता है, जिससे ज्ञान प्राप्ति की क्षमता विकसित हो सके।

भगवद्गीता में पाठ्यक्रम

शिक्षा के उद्देश्यों की प्राप्ति पाठ्यक्रम द्वारा होती है। भगवद्गीता में पाठ्यक्रम को **''परा विद्या''** और **''अपरा विद्या''** दो भागों में विभक्त किया गया है। अपरा विद्या के अन्तर्गत भौतिक तत्वों का ज्ञान

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 15 Issue 1,Jan- 2025
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 8.018
(An open access scholarly, peer-reviewed, interdisciplinary, monthly, and fully refereed journal.)

जिसे शरीर इन्द्रियों तथा मन की सहायता से प्राप्त किया जाता है।[7] भूमि, जल, प्रकाश, वायु तथा इन्हें जानने के सभी उपादान मन एवं बुद्धि में सभी अपरा प्रकृति के अंग हैं।

भगवद्गीता में शिक्षक–शिक्षार्थी

भगवद्गीता ने शिक्षक के रूप में एक महान व्यक्ति की कल्पना की है। गुरू छात्र के अज्ञान के आवरण को हटाकर उसे ज्ञान प्राप्ति कराता है और शिष्य अपने प्रयासों द्वारा गुरू से ज्ञानोपार्जन कर अपने जीवन के परम लक्ष्य मुक्ति को प्राप्त करता है। अतः अध्यापक तथा शिक्षार्थी शिक्षण के दो प्रमुख अंग है और इन दोनों के मध्य सम्पन्न होने वाली अन्तः क्रिया शिक्षा है। गुरू में नैतिक गुण एवं चारित्रिक राफलता होनी चाहिए। उसके पास केवल सैद्धान्तिक ज्ञान ही न हो, वरन् उसे स्वयं व्यवहारिकता से सम्पन्न होना चाहिए। सभी भोगों से विरक्त, अहंकार शून्य, शैक्षिक योग्यता, अध्यापन कुशलता से परिपूर्ण होना चाहिए। उसे छात्र को विश्वास दिलाना चाहिए कि **''मेरा भक्त कभी असफल नहीं होता।'' (9/31)**[8]

भगवद्गीता की शिक्षा का मुख्य आधार एकात्मकता है। शिक्षा ग्रहण करने के लिए तप, संयम, समर्पण, श्रद्धा जैसी योग्यतायें छात्र में होनी चाहिये। (6/8, 10)[9] भगवद्गीता का दृढ़ मत है कि केवल सत्पात्र को ही शिक्षा देनी चाहिए। शिष्य को भी गुरु के प्रति समर्पण भाव रखना भगवद्गीता सिखलाती है कि **''केवल आप ही मेरे संशय को मिटा सकते हैं।'' (6/39)**[10]

निष्कर्ष व उनका शैक्षिक महत्व

वर्तमान समय में जब भारतीय शिक्षा पश्चिम का अन्धानुकरण करके न घर की रही है और न घाट की, इन अनपेक्षित सामाजिक परिस्थितियों तथा प्रवृत्तियों के संदर्भ में भगवद्गीता के विचार और भी अधिक मूल्यवान हो जाते हैं। वास्तव में स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् भी हम गुलामी की मानसिकता से वस्त हैं। विदेश का हर विचार व नवाचार हमें इतना प्रभावित कर देता है कि उसकी आवश्यकताओं या सामाजिक परिस्थितियों के देखे बिना ही उसे अपना लेते हैं।

भारतीय शिक्षा के बारे में 1835 की फरवरी में लॉर्ड मैकाले की एक टिप्पणी ध्यान देने योग्य है, जो कि उसने ब्रिटिश संसद में एक ऐतिहासिक भाषण में दी थी **''मैं भारत की लम्बाई से चौड़ाई तक सारा घूमा लेकिन मुझे एक भिखारी भी ऐसा नहीं मिला जो कि चौर हो। मैंने इस देश में इतना धन देखा, इतनी नैतिकता देखी कि मैं सोचता हूँ कि हम उस देश को कभी भी पूर्णतः नहीं जीत सकते जब तक कि हम उसकी उस रीढ़ को न तोड दें, जो कि उसकी प्राचीन शिक्षा है। हमें उसकी शिक्षा को विदेशी शिक्षा व अंग्रेजी से प्रतिस्थापित करना होगा जिससे वे अपना स्वाभिमान, अपनी संस्कृति को भुलाकर हमारी सस्कृति को श्रेष्ठतम व अपनी को बिल्कुल बेकार**

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 15 Issue 1,Jan- 2025
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 8.018
(An open access scholarly, peer-reviewed, interdisciplinary, monthly, and fully refereed journal.)

समझ कर दीन–हीन मानने लगें।''[11]

हमारे धार्मिक ग्रंथ हमारे अपने हैं, हमारी परिस्थितियों में उत्पन्न हुए, अपनी आवश्यकताओं के अनुरूप हैं। इसमें उपलब्ध शैक्षिक विचार व शिक्षण विधियों वर्तमान समय में भी हमारे लिए उपयोगी है।

भगवद्गीता प्रणीत शिक्षा, भारतीय दर्शन व विज्ञान की उत्कृष्ट अवधारणाओं पर अवलबित है। भारतीय मनोविज्ञान में आध्यात्मिकता मानव की मूल प्रवृत्तियों में से एक है। इसी कारण मनुष्य में सत्य के प्रति निष्ठा होती है[12] जिससे प्रेरित होकर उसकी खोज के लिए मनुष्य नानाविध अनुसंधान करता है।

भारतीय दर्शन के अनुसार ज्ञान वाहे भौतिक हो या आध्यात्मिक, मानव की आत्मा में विद्यमान है। बहुधा वह प्रकाशित न होकर ढका हुआ होता है। जब उसका आवरण धीरे–धीरे हटता है तो हम कहते है कि हम सीख रहे हैं। जैसे–जैसे अनावरण की क्रिया बढ़ती जाती है, हमारे ज्ञान की वृद्धि होती जाती है। जिस पर से यह आवरण पूर्णतः हट जाता है. वह सर्वज्ञ तथा सर्वदर्शी हो जाता है। चकमक पत्थर में निहित अग्नि के समान मानव में ज्ञान छिपा होता है। सुझाव, उद्दीपक, मनन या चिंतन ही वह घर्षण है जो उस ज्ञानाग्नि को प्रकट कर देता है।[13]

आज भारत एक संक्रमण काल से गुजर रहा है। आधुनिक परिस्थितियों के अनुरुप नवीन मूल्यों का निर्माण नहीं हो पा रहा है। कारण किसी ऐसे प्रयोजनवादी दर्शन का अभाव है जो शिक्षा को गतिशील बना सके। भगवद्गीता दर्शन सबको आधार प्रदान करता है। आवश्यकता मात्र इस बात की है कि इसमें निहित शिक्षा के दार्शनिक विचारों का विश्लेषण इस दृष्टिकोण से किया जाए जो कि देश की वर्तमान आवश्यकताओं के अनुरुप हो सकें। इसमें निहित शैक्षिक विचारों का यह व्यवस्थित रुप इस भगवद्गीता दर्शन की तुलना में उसके महत्व का सही मूल्यांकन कर सकता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

---

1. कर्मजं बुछियेुक्ता हि फलं त्यक्तवा मनीषिण।
    जन्मबन्धविनिर्मुक्ता पदं गच्छन्त्यनामयम्।।2/51।।
    यदा ते मोहकलित बुद्धिर्व्यतितरिष्यति।
    तदा गन्तसि निर्वेदं श्रोतत्यस्य श्रुतस्य च।।2/52।।
2. यावानर्थ उदपाने सर्वतः सम्प्लुतोदके।
    तावान् सर्वेषु वेदेषु ब्राह्मणस्य विजानत।।2/46।।
    कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।
    मा कर्मफलहेतुर्भूमां ते सङ्गोऽस्तवकर्मणि।।2/47।।
3. गतसंगस्य मुक्तस्य ज्ञानावस्थितचेतसः।

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 15 Issue 1,Jan- 2025
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 8.018
(An open access scholarly, peer-reviewed, interdisciplinary, monthly, and fully refereed journal.)

यज्ञायाचरतः कर्म समग्रं प्रविलीयते।।4/23।।

4. तत पदं तत्परिमार्गितव्य यस्मिन्गता न निवर्तन्ति भूयः।
तमैव चाद्यं पुरुषं प्रपद्ये यतः प्रवृत्तिः प्रसृता पुराणी।।15/4।।

5. यथेच्छसि तथा कुरु।।18/63।।

6. परं भूयः प्रवक्ष्यामि ज्ञानानां ज्ञानमुत्तमम्।
मज्ज्ञात्वा मुनयः सर्वे परा सिद्धिमितो गताः।।14/1।।

7. क्षेत्रक्षेत्रज्ञयोरेवमन्तरं ज्ञानचक्षुषा।
भूतप्रकृतिमाक्षं च ये विदुर्यान्ति ते परम्।।13/34।।

8. क्षिप्रं भवति धर्मात्मा शश्वच्छान्ति निगच्छति।
कीन्तय प्रतिजानीहि न में भक्तः प्रणश्यति।।9/31।।

9. ज्ञानविजानतृमात्मा कूटस्थो विजितेन्द्रिय।
युक्त इच्युच्यते योगी समलोष्टाश्मकान्चन।।6/8।।
योगी युञ्जीत सततमात्मानं रहसि स्थित।
एकाकी यतचित्तात्मा निराशीरपरिग्रहः।।6/10।।

10. एतन्मे सशयं कृष्णा छेत्तुमर्हस्यशेषतः।
त्वदन्यः सशयस्यास्थ छेत्ता न ह्युपपद्यते।।6/39।।

11. The Awaking Ray (1935) : The Gnostic centre, London

12. गीता 4/38–40

13. योगसंन्यस्तकर्माणं ज्ञानसछित्रसंशयम्।
आत्मवन्तं न कर्माणि निबन्धन्ति धनंजय।।5/41।।

14. डॉ० गिरीश पचौरी, शिक्षा दर्शन, मेरठ, आर लाल बुक डिपो
15. डॉ० लक्ष्मी लाल के०, ओत शिक्षा दर्शन की पृष्ठभूमि, जयपुर, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी
16. डॉ० राम शकल पाण्डेय, शिक्षा के दार्शनिक सिद्धान्त, आगरा, अग्रवाल पब्लिकेशन
17. डॉ० आर०के० सरल, भाषा शिक्षण, लॉयल बुक डिपो, मेरठ
18. पारस नाथ राय, अनुसंधान परिचय, आगरा, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल पब्लिकेशन–3, 2002
19. सुनीता सिंह, श्रीमद्भगवद्गीता के शैक्षिक एवं मनोवैज्ञानिक निहितार्थ पीएच०डी०, शिक्षाशास्त्र, डॉ० राम मनोहर लोहिया अवध विश्वविद्यालय, फैजाबाद।